नौ तत्त्व की अवधारणा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भारत देश में अनेक धर्म दर्शन, अनेक विचारधाराएं उत्पन्न हुई हैं। इनमें जैन धर्म भी एक महत्वपूर्ण धर्म है। इस धर्म में दार्शनिक सिद्धान्तों की स्वतंत्रता से व्याख्या की गई है। जैन धर्म के साधु पूर्ण अहिंसक होते हैं। वे मन, वचन और काया की प्रवृत्ति अर्थात तीन करण और तीन योग से न तो हिंसा करते हैं, न करवाते हैं और न ही हिंसा का अनुमोदन करवाते हैं। जैन धर्म के सम्पूर्ण सिद्धान्त अहिंसा के इर्द–गिर्द ही चक्कर लगाते हैं। इस धर्म में नौ तत्व माने गये हैं–जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध व मोक्ष।

जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य। जीव या आत्मा जैन दर्शन में एक स्वतंत्र द्रव्य है। इसका लक्षण है–चेतना। चेतना को जीव का असाधारण धर्म बतलाया गया है–चेतना लक्षणो जीवः। अजीव द्रव्य वे द्रव्य हैं जिसमें चेतना नहीं होती। अजीव द्रव्य के पांच भेद है– पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। यह विश्व छह द्रव्यों की रचना है। इसमें दो प्रकार के जीव है– मुक्त जीव और संसारी जीव। मुक्त जीव को परमात्मा, ईश्वर, सर्व शक्तिमान ,सिद्ध, शुद्ध जीव, आदि नाम से जाना जाता है। इन मुक्त जीवों के अतिरिक्त सभी जीव संसारी जीव हैं। अजीव दव्यों में पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्य आते हैं। सृष्टि की रचना इन्हीं द्रव्यों के सहयोग से हुई है।

जैन दर्शन पुण्य और पाप को एक अन्य रूप में स्वीकार करता है। अध्यात्म की दृष्टि से पुण्य और पाप ये दोनों बन्धन हैं। भारतीय चिन्तकों ने पुण्य–पाप के सम्बन्ध में विस्तार से लिखा है। जैनदर्शन ने पुण्य को अपेक्षा–दृष्टि से हेय, ज्ञेय और उपादेय तीनों माना है। निश्चयनय की दृष्टि से पुण्य और पाप दोनों हेय हैं। पुण्य सुहावना है और पाप असुहावना है। लोहे की बेड़ी काली होने से भद्दी लगती है, किन्तु सोने की बेड़ी में चमक–दमक होने पर भी बन्धन तो है ही। दोनो व्यक्ति को बांधकर रखती है। तलवार स्वर्ण की बनी हुई है, इतने मात्र से उसमें कोई अन्तर नहीं आता, क्योंकि स्वर्ण की होने पर भी प्राणनाशक तो है ही। पुण्य को आज की

भाषा में प्रथम श्रेणी कारावास कह सकते हैं और पाप को कठोर कारावास। मोक्ष प्राप्ति के लिए दोनों त्याज्य हैं।

आस्रव का अर्थ है– कर्मों के आने का द्वार। आत्मा के भीतर अष्ट कर्मों का आना आस्रव कहलाता है। आत्मा के साथ जुड़ने वाले कर्मास्रव हैं। आत्मा और कर्म का अस्तित्व पृथक्–पृथक् है। पंचास्रव का अर्थ है– पाँच कर्मों के आने का द्वार। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग पंचास्रव कहलाते हैं। पाप एवं पुण्य का आत्मा की तरफ आकर्षित होना आस्रव है। आत्मा शुद्ध–बुद्ध और मुक्त है। यह रूप, रस, गन्ध और स्पर्श से रहित है। कर्म रज के संयोग से आत्मा मलिन हो जाता है। मन, वचन और काया कर्मों का भुगतान करने के लिए हैं। आत्मा की तरफ कर्मरज कैसे आकर्षित होते हैं, इसको एक उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। जैसे तालाब में किसी स्थान पर छेद बनाकर उसमें पाईप डालकर जगह बना दी जाये तो उसके अन्दर शुद्ध और अशुद्ध दोनों प्रकार का जल चला जाता है। जल के प्रवेश होने से तालाब जल से भर जाता है। वैसे ही आत्मा में मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग के द्वारा कर्म रज आत्मा के साथ मिलकर आत्मा को मलिन बना देते हैं। इसको रोक देने से आत्मा अपने स्वसरूप में अवस्थित रहता है।

निर्जरा का अर्थ है– अलग होना। आत्मा अनन्त काल से कर्मों से बद्ध है। भीतर प्रविष्ट कर्मों को निकाल देना निर्जरा है। सवंर और निर्जरा का सम्बन्ध कर्मों से हैं। सभी दर्शनों में कर्म का विश्लेषण किया गया है। जो धर्म दर्शन आत्मा में विश्वास करते हैं, वे कर्म में भी विश्वास करते हैं। बिना कर्म के आत्मा शरीर में नहीं रह सकता। कर्म आत्मा का बंधन है। कर्म से मुक्त होने के बाद आत्मा निर्मुक्त हो जाता है। कर्म का संयोग ही आत्मा को शरीर में बांधकर रखता है। संयोग का अंतिम परिणाम वियोग है। आत्मा और परमाणु ये दोनों भिन्न हैं। वियोग में आत्मा शुद्धात्मा है और परमाणु परमाणु। इनका संयोग होता है, तब आत्मा रूपी कहलाती है और परमाणु कर्म। कर्म परमाणु आत्मा से चिपक कर कर्म बन जाते हैं। उस पर अपना प्रभाव डालने के बाद वे अकर्म बन जाते हैं। अकर्म बनते ही वे आत्मा से विलग हो जाते हैं। इस बिलगाव की दशा का नाम है कर्म निर्जरा।

निर्जरा का अर्थ है– अलग होना। आत्मा अनन्त काल से कर्मों से बद्ध है। भीतर प्रविष्ट कर्मों को निकाल देना निर्जरा है। सवंर और निर्जरा का सम्बन्ध कर्मों से हैं। सभी दर्शनों में कर्म का विश्लेषण किया गया है। जो धर्म दर्शन आत्मा में विश्वास करते हैं, वे कर्म में भी विश्वास करते हैं। बिना कर्म के आत्मा शरीर में नहीं रह सकता। कर्म आत्मा का बंधन है। कर्म से मुक्त होने के बाद आत्मा निर्मुक्त हो जाता है। कर्म का संयोग ही आत्मा को शरीर में बांधकर रखता है। संयोग का अंतिम परिणाम वियोग है। आत्मा और परमाणु ये दोनों भिन्न हैं। इनका संयोग होता है, तब आत्मा रूपी कहलाती है और परमाणु कर्म। कर्म परमाणु आत्मा से चिपक कर कर्म बन जाते हैं। उस पर अपना प्रभाव डालने के बाद वे अकर्म बन जाते हैं। अकर्म बनते ही वे आत्मा से विलग हो जाते हैं। इस बिलगाव की दशा का नाम है मोक्ष। शुद्धात्मा का वास्तविक ज्ञान मोक्ष है।